राहु-केतु की खोज

राहु-केतु की खोज

वैज्ञानिक जिज्ञासा पर एक कहानी

राकेश पोपली

विज्ञान प्रसार

राहु-केतु की खोज

प्रकाशक
विज्ञान प्रसार
टेक्नॉलोजी भवन
नई दिल्ली - 110 016
© सभी अधिकार विज्ञान प्रसार के पास सुरक्षित

लेखक : राकेश पोपली

सम्पादक : नरेन्द्र सहगल
आइ. एस. बी. एन. - 81-7480-009-3

पृष्ट सज्जा एवम् रूपांकन विज्ञान प्रसार द्वारा

भारत में दि ऑफसैटर्स , नई दिल्ली, द्वारा मुद्रित

आभार :

श्री उमेश मेहता (सज्जा)
श्री गौतम बक्शी (सज्जा)
श्री प्रेमनाथ महतो (कार्यालय सहायता)
साइ कंप्यूटर्स (कंपोज़िंग)
श्रीमती रमा पोपली
डॉ० अशोक सिनहा
श्री जी० वी० एस० आर० प्रसाद
डॉ० बी० के० सिन्हा
श्री दिलीप कुमार तेतरवे
अभिमन्यु, शिवानी, दिव्या
जवाहर नवोदय विद्यालय के प्राचार्य,
कला शिक्षक एवं जीवन, रमेश, सुदर्शन
बिड़ला प्रौद्योगिकी संस्थान
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद

लेखक

प्राक्कथन

यह पुस्तिका उन प्रकाशनों में से एक है जो विज्ञान प्रसार द्वारा वर्ष 1995 में होने वाले पूर्ण सूर्यग्रहण के अवसर पर सभी आयु के वर्ग्रों के लिए तैयार किये गये हैं। कुल मिलाकर प्रयास यह किया गया है कि सरल भाषा में, रोचक ढंग से, ग्रहण-विषय से सीधा और दूर-नज़दीक का सम्बन्ध रखने वाले सभी महत्वपूर्ण पहलुओं बारे बताया जाये और ठीक से समझाया जाये। यही नहीं, वर्ग्रों के जिज्ञासु मन में उठने वाले बहुत से प्रश्नों के उत्तर भी इन प्रकाशनों में पाठकों को मिलेंगे।

इन प्रकाशनों के लिये अवसर चाहे सूर्यग्रहण का रहा हो लेकिन इनमें सम्मिलित सामग्री या ज्ञान की उपयोगिता ग्रहण की घटना तक ही सीमित नहीं; उसके बाद भी बनी रहेगी।

खगोल-विज्ञान विषय पर हिन्दी में मौलिक रचनायें बहुत कम देखने में आती हैं। इस दिशा में डा० राकेश पोपली की इन रचनाओं का अपना अलग महत्व है और उनका यह प्रयास सराहनीय है। इन पुस्तिकाओं में सम्मिलित अधिकतर चित्र/ ग्राफिक्स विशेष रूप से इन्हीं रचनाओं के लिये बनाये गये हैं।

पाठकों से अनुरोध है कि वे अपनी प्रतिक्रियायें, सुझाव इत्यादि अवश्य हमें लिख भेजें।

नरेन्द्र सहगल

एक

"छुट्टी!", राजू घर में घुसते ही चिल्लाया, "कल छुट्टी, तेरी-मेरी कुट्टी।"

शीला बोली, "भैया, छुट्टी तो कल हमें भी है, पर क्यों?

राजू ने बताया, "कल सूर्य-ग्रहण जो है।"

खाना खाते-खाते ही शीला पूछ बैठी, "माँ, यह ग्रहण क्या होता है?"

"सूरज भगवान को राहु ग्रस लेता है, और क्या", माँ ने बताया।

"राहु खा जाता है सूरज को? माँ, राहु कौन है?"

"तेरा सिर है। इतना-सा मुँह है और बातें बनाती है बड़ी-बड़ी। यह नहीं कि चुपचाप बैठ कर खाना ही खा ले।.... अपने टीचर से पूछना।"

अगला दिन, यानी 16 फ़रवरी, 1980! बाबूजी ने पहले ही सबको घर से बाहर निकलने से मना कर दिया था। क्यों ? सूर्य-ग्रहण जो होगा।

"बाबूजी, सूर्य-ग्रहण में क्या होगा ?", राजू ने पूछ लिया।

"होगा यही कि सूर्य काला पड़ जायेगा। दिन में अँधेरा हो जायेगा।"

"क्या बिल्कुल रात हो जायेगी ? फिर दिन कब होगा ?"

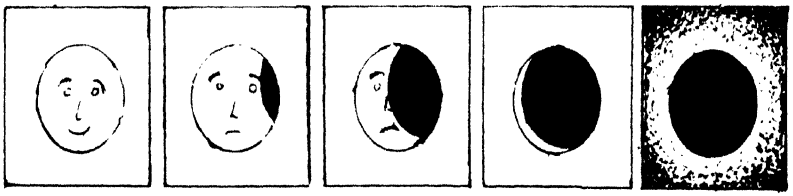

"बस, थोड़ी देर बाद सब ठीक हो जायेगा", बाबूजी ने हँस कर कहा।

"सचमुच ? तब तो हम देखेंगे", राजू उत्साह से बोला।

बाबूजी ने डाँट दिया, "ग्रहण को देखेगा ! आँख फुड़वायेगा क्या अपनी ? आराम से घर में बैठो दोनों, तुम और शीला, समझे ? चाहे बैठ कर खेलो, चाहे पढ़ो। पर बाहर नहीं निकलना है।"

दो

सुबह नाश्ते के बाद माँ, दादी और शीला तो भजन करने बैठ गई थीं। बाबूजी आराम-कुर्सी पर बैठे अखबार के पन्ने पलट रहे थे। स्पष्ट था कि उनके दफ़्तर में भी छुट्टी थी। "पर इस समय भजन क्यों? क्या आज खाना नहीं बनेगा ?" ऐसा सोचते-सोचते राजू भी भजन में बैठा। पर थोड़ी ही देर में वह ऊब गया और अपने सोने के कमरे में जा बैठा। खिड़की से बाहर सड़क दिखाई दे रही थी – बिल्कुल वीरान ! आदमी तो आदमी, आवारा कुत्ते-बिल्ली तक नहीं दिखाई देते थे। राजू सोच रहा था, लगता है सभी लोगों को अपने-अपने बाबूजी ने बाहर निकलने से मना कर दिया है। यहाँ तक कि पान की दूकान भी बंद है, जबकि छुट्टी के दिन तो वहाँ हर समय चहल-पहल रहती है।

बाहर चढ़िया धूप खिली हुई थी। राजू का मन कह रहा था, चलो धूप में खेलें। यहाँ भीतर कुछ अँधेरा है। बाहर कितना मज़ा आता ! पर बाबूजी ने मना जो किया है। इसके अलावा, कोई और बच्चे भी तो खेलने नहीं निकले हैं उसी राहु के डर से। राजू ने अपनी पत्रिका उठाई और उसके पन्ने पलटने लगा। सियार और पंडित की कहानी – ओह, यह तो पढ़ी हुई है, राजू ने सोचा। राक्षस और राजकुमार की कहानी उसे आकर्षक लगी। वह पढ़ने लगा कि राजकुमार चंद्रहास कैसे सूर्यमणि की खोज में निकल पड़ा और ....। आखिर पत्रिका पूरी पढ़ ली गई और फिर पहले वाली बेचैनी ने राजू को आ घेरा। राहु क्या राक्षस है ? लोगों की आँखें फोड़ देता है? .... कब होगा ग्रहण ? अभी तो इतनी धूप निकली हुई है .... राजू ने जमुहाई ली।

थक कर राजू फिर खिड़की से बाहर देखने लगा। धीरे-धीरे उसे लगने लगा कि शाम घिरती आ रही है – हर दिन की तरह नहीं, कुछ अजीब और मटमैली-सी।

"आज इतनी जल्दी शाम कैसे हो रही है ?", उसने सोचा। आकाश तो बिल्कुल साफ़ था – कोई बादल नज़र नहीं आ रहा था। राजू ने फिर

जमुहाई ली .....

..... अचानक पश्चिम से आँधी-सी उठती दिखाई दी। राजू ने चौंक कर उस ओर देखा। बाप रे! आँधी क्या थी, काला पहाड़ ही था। राजू ने एक बार सिर उठा कर देखा – सूर्य भगवान कुछ डरे-डरे आकाश में दौड़ रहे थे। दूसरी ओर वह काला भीमकाय राक्षस लंबे-लंबे डग भरता हुआ चला आ रहा था। अब सूर्य भगवान का चेहरा स्याह पड़ने लगा था – मालूम नहीं डर से, या राक्षस के हाथों में आ जाने से। बेचारे राजू की हिम्मत नहीं पड़ रही थी कि सीधा राक्षस की ओर देखे, कनखियों से ही देख पा रहा था। इतने में राक्षस ने सूर्य को पूरा ही निगल लिया और एक भयंकर डकार भरकर अपना सिर घुमाया। राजू को देखते ही वह एक हाथ में शूल उठा कर सीधा उसी की ओर दौड़ा। डर के मारे राजू की घिग्गी बँध गई। राक्षस के चलने से ऐसा तूफ़ान आया कि राजू का शरीर तिनके की भाँति इधर-उधर डोलने लगा। जैसे ही राक्षस ने शूल उठाया, राजू के मुँह से हल्की-सी चीख निकल गई। और तभी .... यह क्या ! शीला राजू को हिला-हिला कर कह रही थी, " भैया, देखो न, क्या हो रहा है ?"

"ऐं", राजू ने अँगड़ाई लेकर इधर-उधर देखा। "कहाँ गया रा .... राहु?"

"क्या बैठे-बैठे सपना देख रहे थे, भैया?", शीला का स्वर कुछ घबराया हुआ था। वह बोली, "देखो न, बाहर देखो।"

"सपना ? न .... नहीं .... हाँ.... वह राक्षस .... कहाँ गया ? .... सपना ही था, शायद। "

राजू ने आँखें खोल कर चारों ओर देखा। रात हो गई थी। कमरे में तो शीला ने बत्ती जला दी थी, पर खिड़की के बाहर सड़क लगभग अँधेरे में डूबी थी। बाहर के पेड़, खंभे और मकान भुतहे-से दिखाई दे रहे थे। आसमान में एकाध तारा दिखाई दे रहा था। चमेली की सुगंध धीरे-धीरे कमरे को भरने लगी थी, जैसा हर रात होता था। परंतु सड़क पर एक अजीब-सा सन्नाटा छाया हुआ था। बगल के कमरे में अब भी भजन चल रहा था।

पर यह क्या ? एकाएक बाहर हल्का-सा प्रकाश हुआ, जैसे किसी ने बटन दबा कर बत्ती जला दी हो। सड़क पर काली और सफ़ेद पट्टियाँ पूर्व की ओर दौड़ी

जा रही थीं, जैसे साँप रेंग रहे हों। एक बार के लिये राजू और शीला दोनों डर गये। लेकिन प्रकाश धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था, मानो दिन हो रहा हो। राजू की समझ में नहीं आ रहा था कि यह क्या हो रहा है ! शाम के बाद तुरंत दिन – यह कैसी उल्टी बात है? शीला बोली, "मेरी समझ में भी नहीं आ रहा।"

दोनों उठे और बरामदे में आ गये। बाबूजी अखबार पढ़ चुके थे और खुले दालान की तरफ़ देख रहे थे। राजू ने पूछा "अभी .... थोड़ी देर पहले शाम हो गई थी न ?"

बाबूजी हँस कर बोले, "ग्रहण ही तो था। अब छूट रहा है – लगभग पूरा हो चुका है।" सचमुच, ऐसा लगता था जैसे रात के बाद बड़ी तेज़ी से दिन हो रहा हो। तभी दालान के बाहर दरवाज़े पर दस्तक हुई। बाबूजी ने पूछा, "कौन है?" बाहर से मोटी-सी आवाज़ में किसी ने उत्तर दिया। बाबूजी ने उठ कर दरवाज़ा खोला और कहा, "अच्छा, तुम हो !" फिर उन्होंने माँ को आवाज़ दी।

राजू और शीला ने दरवाज़े की ओर देखा। एक बार तो दोनों का दिल दहल गया। बाहर एक लंबा, काला-सा आदमी खड़ा था। पूरा बदन नंगा, बस कमर में एक लंगोटी। घुँघराले घने बाल, कानों में छोटी बालियाँ, कई दिनों की बढ़ी हुई दाढ़ी, नंगे धूल में सने पाँव। एक हाथ में ऊँची-सी लोहे की छड़ थी, जिसका निचला सिरा मुड़ कर फैला हुआ था, जैसे पतली-सी टाँग में पैर लगा हुआ हो। दूसरे हाथ में एक बोरा था। राजू पहले ही स्वप्न में राक्षस को देख कर डर चुका था। अब अपनी आँखों के सामने 'राहु के अवतार' को देख कर उसका दिल बैठ गया। शीला ने धीरे-से फुसफुसा कर पूछा, "क्या यह इस बोरे में बच्चों को उठा कर ले जाता है? "

माँ भंडार घर से निकल कर आईं। उनके हाथ में रसोई का बड़ा बर्तन था, जिसमें चावल और दाल दिखाई दे रहे थे। एक प्लास्टिक के लिफ़ाफ़े में कुछ और भी था – शायद आटा। 'राहु' ने अपना बोरा खोला और .... नहीं, उसमें से कोई बच्चा कूद कर नहीं निकला। बल्कि 'राहु' ने माँ से लेकर सामान उस बोरे में ठीक से रख लिया। फिर उसने पीठ पर बोरा लादा और चल दिया। माँ ने राहु-केतु के शमन का मंत्र बुदबुदाते हुए दरवाज़ा बंद कर दिया और फिर भजन

वाले कमरे में जाने लगीं।

"यह कौन था, माँ ?", शीला ने माँ का आँचल पकड़तें हुए पूछा, "क्या यही राहु है ?"

"इसी शूल से आँख फोड़ता है?", राजू के स्वर में भी घबराहट थी।

"नहीं, पगले, यह तो महलू डोम था", माँ ने हँस कर कहा। "इसके हाथ में जो छड़ी थी, उससे पानी की नाली साफ़ करता है।" राजू और शीला की जान में जान आई।

माँ फिर से भजन करने चली गईं तो दोनों बच्चे बाबूजी के पास आ बैठे। राजू ने पूछा "अच्छा बाबूजी, क्या राहु लोगों की आँखें नोच लेता है?"

बाबूजी गंभीर होकर मानो पुरानी यादों में खो गये। फिर साँस छोड़ कर बोले, "ऐसा ही समझ। मैं जब तेरे जितना था न, तब एक दिन इसी तरह सूर्य-ग्रहण लगा था। हमारे पड़ोस में एक लड़का रहता था – विनू। वह ज़िद करके ग्रहण के दौरान बाहर निकला और सूर्य को देखने लगा। बस, हो गईं उसकी

आँखें ख़राब।"

"क्या अंधा हो गया था वह ?"

"उस समय तो अंधा जैसा ही हो गया था। बहुत दिन तक उसका इलाज चलता रहा। फिर भी पूरा ठीक नहीं दीखता था उसे। .... यह देख, अखबार में भी लेख छपा है कि ग्रहण के समय कुछ अजीब किस्म की किरणें निकलती हैं सूर्य में से।"

थोड़ी देर में बिल्कुल दिन-दोपहर का माहौल हो गया। सब लोगों ने स्नान किया। भूख के मारे राजू और शीला के पेट में चूहे कूद रहे थे, पर खाना बने तभी तो मिले ! नहाने के बाद दादी ने सब बर्तनों पर तुलसी का पानी छींटा, और तब जाकर कहीं खाना बनाने का काम शुरु हुआ।

तीन

रात में दोनों बच्चों ने दादी से पूछा, "बताओ न, यह राहु कौन है ?"

दादी बोली, " देखा नहीं था, कैसे राहु सूरज भगवान को खा गया था? इसीलिये तो खाना बना कर नहीं रखा जाता। घिरन में खाना खराब हो जायेगा। बीठ लग जायेगी न उसको।"

राजू ने टोका, "राहु सूरज को खा गया था तो फिर धूप वापिस कैसे आ गई ?"

दादी ने कहा, "अरे, राहु को पेट थोड़े ही है, बस, सिर ही तो है। उसने मुँह से सूरज को निगला, और सारी दुनिया में अँधेरा छा गया। फिर थोड़ी देर में सूरज उसके गले में से निकल आया। तुम लोग खाने के लिये मचल रहे थे। पर बेटा, जब तक सूरज भगवान राहु के मुँह में हों, तब तक कैसे पकाया-खाया जा सकता है ?"

"राहु क्यों खा जाता है सूर्य को ?", शीला ने पूछा।

दादी ने कहा, "राहु राच्छस जो ठहरा। अच्छा सुनो, तुम्हें कहानी सुनाती हूँ। .... देखो, एक बार देवताओं और राच्छसों ने कहा कि समुंदर में तरह-तरह के रतन हैं, सो क्यों न हम सब मिल कर समुंदर-मंथन करें और इन खज़ानों को निकाल लें।"

"वह कैसे ?", शीला का प्रश्न था।

"जैसे दही को मथने से मक्खन निकल आता है न, वैसे ही समुंदर को मथने से रतन निकल आएँगे। हाँ, तो मिल-जुल कर उन्होंने काम शुरु किया। पहाड़ों में सबसे बड़ा पहाड़ है सुमेरु पहाड़। सो उस सुमेरु पहाड़ की तो मथनी बनाई और, जानते हो, बासुकी नाग को रस्सी बनाया। अब लगे मथने झगर-झगर। मथने लगे तो उसमें से तरह-तरह के रतन निकले। ऐरावत हाथी निकला, सो इंद्र ने ले लिया। घोड़ा भी निकला जिसका नाम मैं भूल गई हूँ, ऊँचे सरवा कि जाने क्या। लक्ष्मी जी भी निकलीं; वे तो भगवान बिसनू (विष्णु) की प्यारी हैं।

फिर जानते हो, भयंकर बिख (विष) निकला, सो भगवान शंकर ने पी लिया। इसीलिये तो नीलकंठ महादेव कहलाते हैं। कामधेनु गाय भी निकली, कल्प बृच्छ भी निकला।

" जब मथते ही गये तो अंत-अंत में धन्वंतरी जी निकले अमृत का कलसा (कलश) ले के। राच्छस लड़ने लगे कि हम लेंगे अमृत। तो भगवान ने मोहिनी बन कर उन सबसे अमृत का कलसा ले लिया। अब बाद में जब देवताओं को अमृत पिलाने लगे तो राहु भी भेस बदल कर वहाँ आ गया। उसने थोड़ा-सा पिया था कि तभी चंद्रमा ने उसे पहचान लिया और उसने बिसनू भगवान से कर दी शिकायत। समझे न ? भगवान ने कहा, अच्छा, तू चोरी करेगा ? उन्होंने चक्कर(चक्र) उठाया और राहु पर चला दिया। राहु की गर्दन कट गई – सिर अलग आकाश में तैरने लगा और धड़ अलग। लेकिन वह मरा नहीं – हाँ, थोड़ा-सा अमृत जो पी चुका था। इसलिये एक की जगह दो राच्छस हो गये

– सिर का नाम राहु, धड़ का नाम केतु !

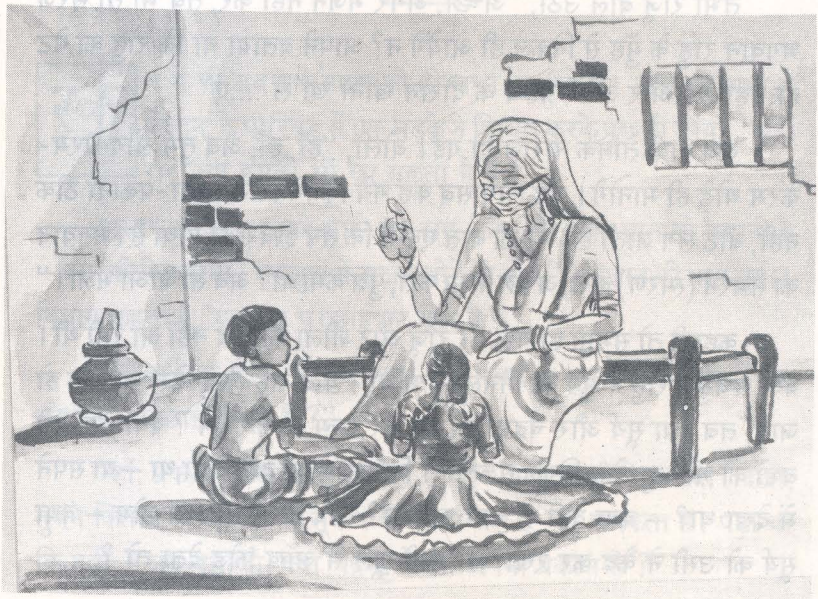

"तभी से राहु-केतु को चंद्रमा से बैर पड़ गया है। और भगवान से भी। सूरज तो बिसनू भगवान का ही रूप है। इसलिए जब कभी आसमान में राहु या केतु चंद्रमा को पूरा खिला देखता है तो "चुगलखोर" कह कर उसे ग्रस लेता है। यही बात सूरज की है। कभी सूरज को घिरन (ग्रहण) लगता है तो कभी चंद्रमा को। समझे न ? अच्छा, कहानी पूरी हुई। अब सो जाओ। क्या कहते हो तुम लोग अंग्रेजों की तरह – घुट नाई ?"

"गुड नाइट", दोनों ने खिलखिला कर कहा।

"अच्छा, दादीजी, ये राहु और केतु क्या फिर मिल कर एक हो जायेंगे ?", शीला से पूछे बिना रहा न गया।

दादी ने कहा, " भला मैं क्या जानूँ ? मंदिर में संत जी कथा करते हैं न, वे ही सुना रहे थे, सो मैंने बता दिया। अब तुम पूछोगे : यह कैसे, वह कैसे ?

भला यह भी कोई बात हुई ?"

तभी राजू बोल उठा, "अच्छा, अगर भजन नहीं करें, तब भी तो सूरज भगवान राहु के मुँह से निकल ही आयेंगे न? आपने बताया था कि राहु का पेट ही नहीं है। और अगर ग्रहण के दौरान खाना खा लें ....ए"

अब दादी तनिक नाराज़ हो गईं। बोलीं, "हाँ, हाँ, अब तुम लोग धरम-करम थोड़े ही मानोगे। बड़े लोग सब कह गये कि घिरन में खाना-पकाना ठीक नहीं, बीठ लग जाती है। सौ की बात एक है कि सब ईश्वर की माया है। भगवान का समरन (स्मरण) करो, अच्छा करम करो, पुन्न कमाओ। अब सो जाओ भला।"

कहानी तो समाप्त हो गई, पर राजू और शीला को नींद नहीं आ रही थी। क्या सचमुच राहु ने सूर्य को निगल लिया था ? यदि राहु-केतु मिल कर एक हो जायें, तब क्या सूर्य और चंद्रमा को खा कर खत्म ही कर देंगे ? क्या हम जैसे बच्चों को भी राहु-केतु निगल सकते हैं ? खिड़की से जो दृश्य देखा था – या सपने में देखा था? – क्या वही राच्छस राहु था? और वह काला-सा डोम – क्या सूर्य को उसी ने कैद कर रखा था? कहीं शूल से आँख फोड़ देता तो ?.....

क्या तुम जानते हो ?

ग्रहण के बारे में पुराने ज़माने से ही लोगों में इतनी घबराहट और भ्रम रहा है कि इस कारण से समय-समय पर किसी की मृत्यु हो गई, कोई लुट गया, किसी को सज़ा मिल गई, और यहाँ तक कि युद्ध में भी हार की जीत और जीत की हार हो गई !

ईसा से 168 वर्ष पहले की बात है कि रोम ने मकदूनिया पर हमला किया था। उसी समय (21 जून को) सूर्य-ग्रहण हुआ। मकदूनियाई लोगों ने समझा कि यह हमारे राजा के राज्य के अंत का संकेत है। वे डर गये। उधर रोम वालों ने उत्साह में भर कर हमला किया और युद्ध जीत लिया।

चार

स्कूल में भी सब बच्चे ग्रहण की ही चर्चा कर रहे थे। राजू की कक्षा में विज्ञान के पीरियड में एक लड़के ने हिम्मत करके पूछ ही लिया, "सर, राहु क्या हमको भी खा सकता है ? "

मास्टर जी बोले, "अरे भाई, यह राहु-केतु वगैरह की बात तो कहानी है – बस, कोरी कल्पना। सचमुच में राक्षस थोड़े ही होते हैं ! विज्ञान की बात सुनो। विज्ञान कहता है, यह सब परछाई का खेल है ....."

"परछाई का खेल ?", कुछ बच्चों ने आश्चर्य से पूछा, "जैसे धूप में हम लोगों की परछाई पड़ती है ?"

"हाँ, प्रकाश और छाया का खेल है यह", मास्टर जी ने बताया। देखो, तुमने किताब में पढ़ा था कि सूर्य में अपना प्रकाश है; वह चमकता है। पढ़ा था कि नहीं ? अब बताओ, क्या चंद्रमा में भी अपना प्रकाश है ?"

"नहीं", सब एक साथ बोले।

"तब चंद्रमा क्यों चमकता है ?"

एक लड़की बोली, "क्योंकि सूर्य का प्रकाश उस पर पड़ता है।"

"और अगर सूर्य का प्रकाश उस पर न पड़े तो ? "

कुछ देर की चुप्पी के बाद राजू बोला, " तब वह नहीं चमकेगा; नहीं दिखाई देगा।"

मास्टर जी खुश हो कर बोले, "बस, चंद्र-ग्रहण के समय यही होता है। सूर्य, पृथ्वी और चंद्रमा एक सीधी लाइन में होते हैं और पृथ्वी की परछाई चंद्रमा पर पड़ती है, यानी सूर्य का प्रकाश चंद्रमा पर नहीं पड़ता", और उन्होंने ब्लैकबोर्ड पर चित्र बनाया। "इसको कहते हैं चंद्र-ग्रहण। चंद्रमा काला पड़ जाता है, यद्यपि पूर्णिमा का समय है।"

किसी ने पूछा, "तब सूर्य-ग्रहण के समय सूर्य पर किसकी परछाई

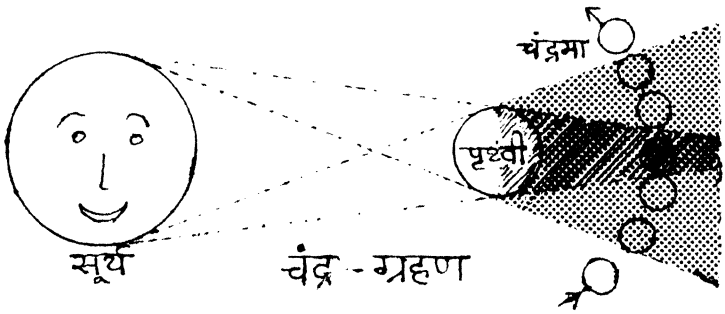

पड़ती है ?"

"सूर्य पर भला परछाई कैसी ?", मास्टर जी ने स्पष्ट किया। "सूर्य तो खुद चमकता है, प्रकाश देता है। सूर्य पर अँधेरा नहीं हो सकता। सूर्य-ग्रहण को समझने के लिये यह दूसरा चित्र देखो। इसमें भी सूर्य, चंद्रमा और पृथ्वी सीधी लकीर में हैं, पर यहाँ चंद्रमा बीच में है। इसलिये चंद्रमा की छाया पृथ्वी पर पड़ेगी। चंद्रमा छोटा है; उसकी छाया पूरी पृथ्वी को नहीं ढक सकती। पृथ्वी के जिस भाग पर चंद्रमा की परछाई पड़ेगी, वहाँ अँधेरा हो जायेगा, है कि नहीं ? बस, इसी को सूर्य-ग्रहण कहते हैं।"

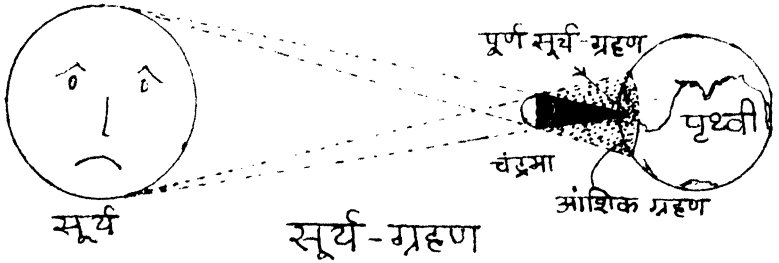

राजू बोल उठा, " इसका मतलब है कि सूर्य-ग्रहण हमेशा अमावस्या के दिन ही होगा ? "

मास्टर जी ने कहा, "सो तो है ही। और चंद्र-ग्रहण जब भी पड़ता है,

पूर्णिमा को ही पड़ता है।"

अब श्याम उठ कर खड़ा हुआ, जिसका दिमाग़ कक्षा में सबसे तेज़ था। उसने कहा, "सर, इस तरह तो हर अमावस और पूर्णिमा को सूरज, चाँद और पृथ्वी एक ही रेखा में होंगे। तब क्या हर अमावस को सूर्य-ग्रहण होता है ?"

मास्टर जी ने सोच कर कहा, "हर अमावस्या को तो नहीं होता। पर क्यों नहीं होता, यह हम नहीं जानते। तुम लोग विज्ञान की ऊँची-ऊँची पढ़ाई करोगे तो जान लोगे। राहु-केतु ही सुनते रहोगे तो कोरे के कोरे रह जाओगे। हम तो इतना ही जानते हैं कि यह सब प्रकाश और छाया से ही होता है।"

राजू के मन में भी एक प्रश्न उमड़ रहा था। आखिर उसने पूछ ही लिया, "सर, मेरे पिताजी कहते हैं कि सूर्य-ग्रहण के समय बाहर निकलने से आँखें फूट जाती हैं। यदि राहु नहीं होता तो आँख कौन फोड़ता है ?"

मास्टर जी ने कहा, "आँखें तो सूर्य की तेज़ रोशनी से भी ख़राब हो जाती हैं। उसके लिए राहु की क्या ज़रूरत है ?"

रात को राजू ने सारी बातें शीला को बताईं और कहा, "देखो, मैं तो कह ही रहा था कि राहु-केतु, यह सब झूठ-मूठ की बात है। मास्टर जी ने बता दिया: सब प्रकाश और छाया का खेल है।"

शीला को इससे संतोष न हुआ। वह बोली, "मगर दादीजी जो कह रही थीं ....."

राजू ने बात काट कर कहा, "बुद्धू, वह तो कहानी थी कहानी, सच थोड़े ही था ! कहानी में तो ऐसा भी आता है कि सियार और शेर ने पंडित से ऐसी-ऐसी बात की। तो क्या शेर और सियार हमारी बोली बोलते हैं ?"

पर शीला ने हार न मानी। वह बोली, "हमारी बोली भले ही न बोलें, पर शेर और सियार कुछ तो बोलते हैं न ? वे होते तो हैं न ? होते हैं, तभी तो कहानी बनी; नहीं तो भला कहानी कैसे बनती ?"

राजू ने झल्ला कर हाथ से सिर ठोंका, "तू नहीं समझेगी। पर हाँ, एक-

दो बातें तो मास्टर जी भी नहीं बता पाये।"

शीला ने कहा, "तब चलो न, हम वाचस्पति अंकल से पूछें।" राजू बोला, "कौन, वही जो यूनिवर्सिटी में पढ़ाते हैं? हाँ, वे तो रात में दूरबीन से भी आकाश को देखते रहते हैं। उनको ज़रूर मालूम होगा।"

वर्ष 1995 के ग्रहण

दि० 15 अप्रैल को भारत के पश्चिमी भागों को छोड़ कर शेष सब जगह सायंकाल चंद्रोदय के समय चंद्र-ग्रहण दिखाई देगा।

दि० 24 अक्टूबर (दीपावली के बाद की सुबह) को पूर्ण सूर्य-ग्रहण होगा। भारत के पश्चिमी भागों में प्रातः 8.30 और पूर्वी भागों में 8.45 के आसपास पूर्ण सूर्य-ग्रहण होगा। आगरा, इलाहाबाद, वाराणसी, राँची और कलकत्ता को जोड़ने वाली रेखा पर से पूर्ण ग्रहण देखा जा सकेगा, जबकि शेष स्थानों पर सूर्य का अधिकतम 70 से 100 प्रतिशत भाग ढक जायेगा।

पाँच

डा० वाचस्पति राजू और शीला के बाबूजी के मित्र थे और कभी-कभी भेंट होने पर बच्चों को अंतरिक्ष की सैर, मंगल ग्रह आदि की बातें बताया करते थे। अगले दिन शाम होने पर दोनों बच्चे उनके घर की ओर चल पड़े। तीन-चार किलोमीटर चल कर जब वे वहाँ पहुँचे, तब तक अँधेरा हो चला था। डा० वाचस्पति उन्हें घर के बाहर बग़ीचे में ही मिल गये। दोनों ने उनको नमस्कार किया।

"आओ बच्चो, आओ। आज अकेले कैसे ?", उन्होंने प्रसन्न होकर कहा।

शीला बोली, "अकेले थोड़े ही हैं; हम दो हैं। वैसे अकेले होने पर भी हम चोर-डाकू से नहीं डरते।"

अंकल ने हँस कर कहा, " और भूत-प्रेत से भी नहीं ? राक्षस से भी नहीं?"

"नहीं", दोनों ने कहा। पर राजू दो दिन पहले की बात सोच कर मन-ही-मन पानी-पानी हो गया, क्योंकि वह सपने में राहु से बहुत डर गया था।

डा० वाचस्पति ने दोनों बच्चों को बैठाया और पूछा, "तुमने आज चाँद देखा?"

दोनों ने कहा, "जी हाँ, आज तो हँसुए की तरह पतला दिखाई दे रहा है।"

डा० वाचस्पति ने अपना चश्मा ठीक करते हुए कहा, "लेकिन मुझे तो पूरा ही दिखाई दे रहा है - बिल्कुल गोल, वृत्ताकार।

दोनों बच्चों ने आश्चर्य से पश्चिम दिशा में देखा, जहाँ चंद्रमा छिपने की तैयारी कर रहा था। दूज का चाँद पतली-सी रेखा के रूप में चमक रहा था। दोनों ने डा० वाचस्पति की ओर प्रश्न-वाचक दृष्टि से देखा तो वे बोले, "ज़रा ध्यान से देखो। जब मेरी बूढ़ी आँखें देख सकती हैं तो तुम ज़रूर देख सकोगे।"

तभी शीला बोल पड़ी, " भैया, देखो न, पूरा गोल दिखाई तो दे रहा है।" सचमुच चमकते हुए हँसुए से आगे एक हल्की-सी रेखा वृत्त की गोलाई को पूरा करती दीख रही थी।

डा० वाचस्पति ने समझाया, "चंद्रमा है तो पूरा गोल। पर चमकेगा सिर्फ़ उतना ही, जितने भाग पर सूर्य की धूप पड़ेगी।"

मौका पाकर राजू ने मन की बात कही, " अंकल, हम यह पूछने आये थे कि राहु-केतु होते हैं या नहीं ?"

अंकल ज़ोर से हँसे और बोले, "ओह, ग्रहण के दिन तुमने राहु-केतु वाली बात सुन ली होगी। इसी से इतनी दूर से पूछने आये हो। भाई वाह! तुम ज़रूर विज्ञान पढ़ोगे।"

शीला ने कहा, "उस दिन ग्रहण था न? दादीजी ने हमें बताया था कि राहु और केतु के ग्रस लेने से ग्रहण होता है। पर भैया के मास्टर जी कहते हैं कि राहु-केतु कुछ नहीं होते। "

डा० वाचस्पति ने एक रहस्यमय मुस्कान के साथ कहा, " राहु-केतु होते तो ज़रूर हैं।"

शीला ने खुशी से कहा, "देखा भैया, मैंने कहा था न ? अच्छा अंकल, आसमान में राहु-केतु दिखाइये न।"

"नहीं", उन्होंने सिर हिलाया, "दिखा तो नहीं सकते।"

"क्या दूरबीन से भी नहीं ?"

"नहीं, दूरबीन से भी नहीं देख सकते उनको।"

राजू बोला, "अंकल, मैं तो कह ही रहा था कि यह सब झूठ-मूठ की बात है।"

अंकल फिर हँसे और बोले, "दोनों की बात ठीक है। राहु और केतु वैसे पदार्थ नहीं हैं, जैसे सूर्य, चाँद, तारे, शुक्र ग्रह आदि हैं और जैसी पृथ्वी है। इसलिये दिखाई तो नहीं दे सकते। पर मैं जानता हूँ कि वे कहाँ हैं। वह देखो", उन्होंने

अंगुली से पूर्व की ओर इशारा किया, "उस तरफ है राहु, और जिधर सूर्य डूब रहा है (पश्चिम की ओर क्षितिज से कुछ नीचे इशारा करके), बस उसके पास ही नीचे की ओर है केतु। ये दोनों गणित के दो बिंदु हैं, और कुछ नहीं।"

दोनों बच्चे अचंभे से अंकल के मुँह की ओर देख रहे थे। अंकल ने फिर कहा, "अच्छा, मैं समझाता हूँ। देखो, चाँद जो है, वह कभी इन तारों के पास दिखाई देता है, कभी उन तारों में। यानी इस पूरे तारामंडल में एक रास्ता है जिस पर वह चलता नज़र आता है। वह रास्ता वृत्ताकार पश्चिम से पूर्व की ओर जाता दीखता है। इसी तरह सूर्य भी पश्चिम से पूर्व की ओर एक वृत्ताकार रास्ते पर चलता है।"

"पर अंकल, सूर्य तो पूर्व से पश्चिम चलता है न?", शीला ने शंका उठाई।

"बेटी, पूर्व से पश्चिम तो सूर्य की हर रोज़ की गति है। ऐसे तो चाँद, तारे, ग्रह सभी पूर्व से पश्चिम की ओर जाते हैं। पूर्व में उदय होते हैं, पश्चिम में अस्त होते हैं। हमें ऐसा इसलिये दीखता है क्योंकि पृथ्वी अपनी धुरी पर लट्टू की तरह घूम रही है; प्रतिदिन वह एक चक्कर पूरा कर लेती है।

"लेकिन पृथ्वी सूर्य के चारों ओर भी तो घूमती है। यह चक्कर एक वर्ष में पूरा होता है। इसके कारण सूर्य तारामंडल में धीरे-धीरे पश्चिम से पूर्व चलता मालूम होता है। तो कहने का अर्थ यह है कि प्रतिदिन उदय-अस्त होने के अलावा सूर्य और चंद्रमा दोनों तारामंडल में भी चलते नज़र आते हैं। ..... अब पते की बात यह है कि तारामंडल में दोनों के रास्ते बिल्कुल एक नहीं, बल्कि ज़रा अलग-अलग हैं। जैसे गोल खरबूजे पर वृत्ताकार धारियाँ होती हैं न, वैसे ही समझो कि तारामंडल में एक धारी सूर्य का रास्ता है और बगल वाली धारी चंद्रमा का रास्ता है। बस, सिर्फ़ एक बिंदु पर वे दोनों रास्ते मिलते हैं।"

राजू ने टोका, "अंकल, यदि दोनों रास्ते वृत्त हैं तो एक बिंदु पर नहीं, दो बिंदुओं पर एक-दूसरे को काटेंगे, जैसे ग्लोब पर देशांतर वाली रेखाएँ उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव पर काटती हैं।"

"बिल्कुल ठीक", डा० वाचस्पति ने शाबाशी देते हुए कहा, "मैं तो देखना

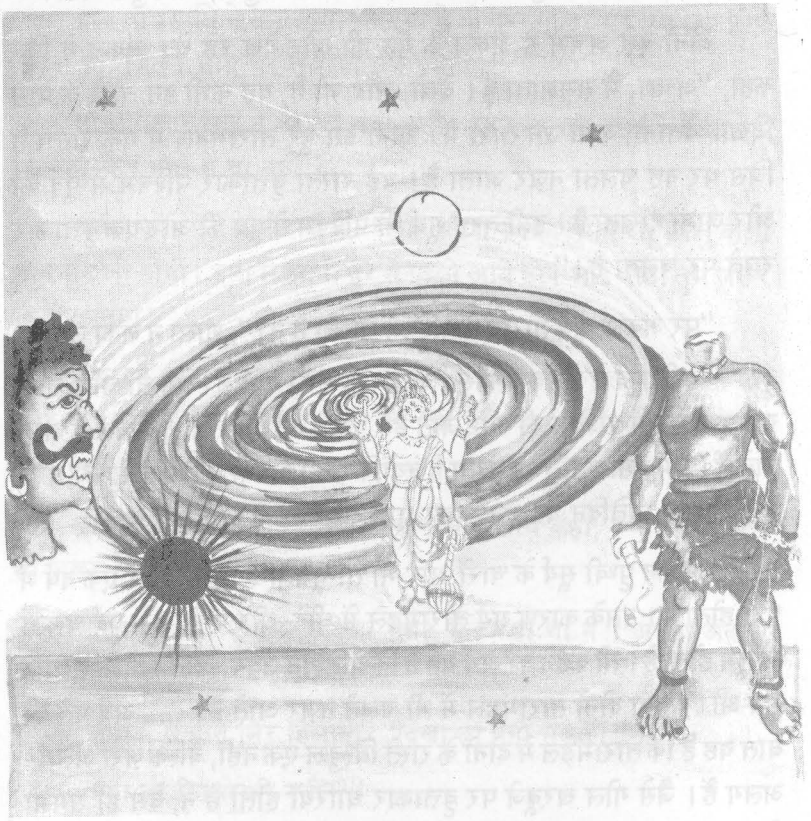

चाहता था कि तुम समझ रहे हो या नहीं; इसीलिये ग़लत बोला। ..... तो बस, इन्हीं दोनों बिंदुओं के नाम हैं – राहु और केतु। समझे?"

"अंकल, यह तो बहुत आसान है", शीला चहक कर बोली।

राजू ने आगे कहा, "तो इसका अर्थ यह हुआ कि दादीजी जो कहानी सुना रही थीं, कि विष्णु भगवान ने चक्र चला कर राक्षस की गर्दन काट दी और उसके दो टुकड़े-राहु-केतु बन गये, वह किसी मूर्ख की बनाई हुई है", और वह हँसने लगा।

डा० वाचस्पति से गंभीरता से कहा, "मुझे तो लगता है कि शायद इस कहानी को बनाने वाला कोई ऋषि या महान विद्वान रहा होगा। वह लोगों को राहु-केतु की बात बताना चाहता होगा, पर लोग अशिक्षित होंगे। इसलिये उसने कहानी बना दी होगी। देखो, सूर्य का आकाश में जो गोल रास्ता है, वही विष्णु भगवान का काल-चक्र है, क्योंकि समय की गिनती उसी से की जाती है। उस रास्ते पर सूर्य का एक चक्कर पूरा होने पर एक वर्ष हो जाता है। उस काल-चक्र को भगवान ने चंद्रमा के इशारे पर चलाया। इसका अर्थ यह हो सकता है कि वह काल-चक्र जिन दो बिंदुओं पर चंद्रमा के रास्ते से मिला, वे ही राहु और केतु हैं। जब सूर्य और चाँद, दोनों राहु या केतु पर हों, तो सूर्य-ग्रहण होता है। जब एक राहु पर और एक केतु पर हो तो चंद्र-ग्रहण होगा।"

राजू बोला, "पर मास्टर जी तो कह रहे थे कि चंद्र-ग्रहण और सूर्य-ग्रहण प्रकाश और छाया के खेल हैं। जब सूर्य, पृथ्वी और चंद्रमा एक सीधी लाइन में आ जाते हैं...."

"बिल्कुल ठीक कहा। वास्तव में तीनों एक ही रेखा में तभी होंगे, जब सूर्य और चंद्रमा दोनों राहु या केतु या दोनों पर होंगे....."

राजू और शीला को कुछ हैरान देख कर उन्होंने अपनी कापी खोली और उसमें चित्र बनाते हुए कहा, "अच्छा, चित्र देख कर आसानी से समझ पाओगे। देखो, केन्द्र में यह है पृथ्वी, जिसकी सतह पर हम सब खड़े हैं। कहने का अर्थ है कि *हमें लगता है* कि हम केन्द्र में हैं। यह है तारामंडल, जैसा हमें गोल

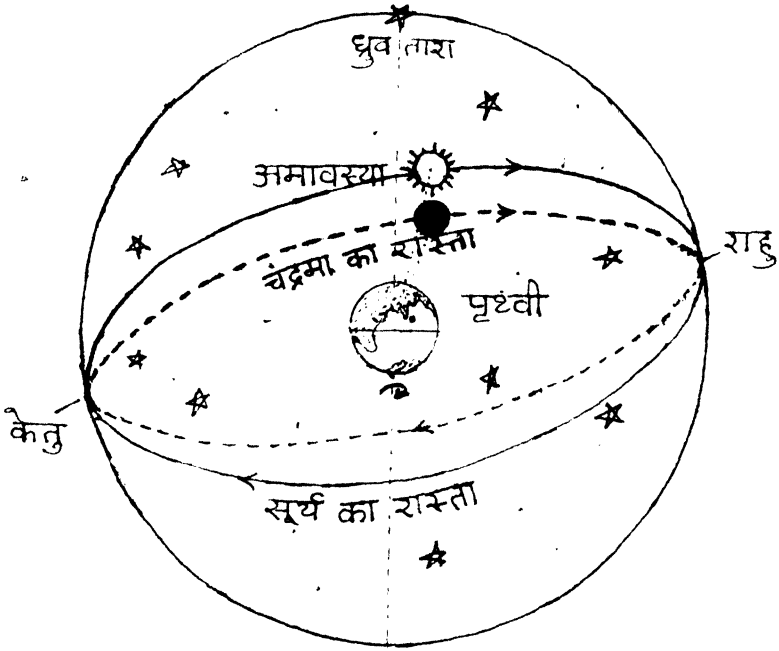

नज़र आता है। अब उसकी सतह पर यह है सूर्य का वृत्ताकार रास्ता, जिस पर यह एक वर्ष में एक चक्कर पूरा करता है। और यह है चंद्रमा का रास्ता। दोनों रास्ते इस बिंदु पर मिल रहे हैं – इसका नाम है केतु, और दूसरी ओर है दूसरा मिलन बिंदु, राहु...."

अचानक शीला बोली, "अंकल, जब सूर्य और चंद्रमा दोनों एक बिंदु पर मिलेंगे तो क्या वे टकरा नहीं जायेंगे?"

"नहीं, नहीं", अंकल ने समझाया, "इस चित्र में तो सिर्फ़ यह दिखाया है कि सूर्य और चंद्रमा हमारी पृथ्वी से *किस दिशा में* पड़ेंगे। दोनों की दूरी तो अलग-अलग है। दोनों एक ही बिंदु पर हैं, इसका अर्थ यह है कि पृथ्वी से एक ही दिशा में हैं।

"हाँ, तो अब यह स्थिति देखो; यह अमावस्या की स्थिति है। सूर्य और

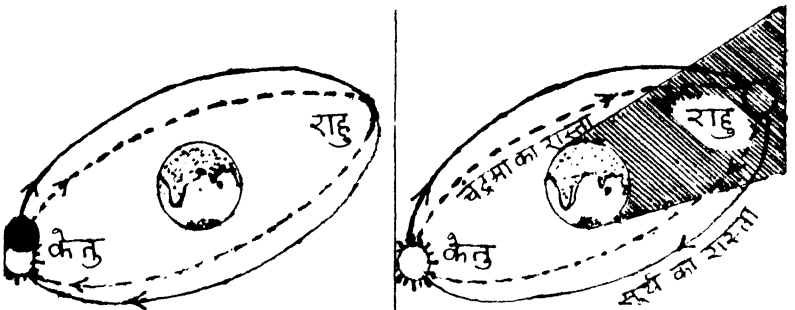

केतु पर सूर्य-ग्रहण चंद्र-ग्रहण

चंद्रमा तारामंडल में पास-पास हैं, परंतु राहु या केतु पर नहीं हैं। इसलिये दोनों पृथ्वी के साथ एक रेखा नहीं बनाते। अब यह दूसरी स्थिति देखो, जिसमें दोनों केतु पर हैं, अर्थात दोनों पृथ्वी से ठीक एक ही दिशा में हैं। अतः सूर्य ग्रहण होगा, जैसे परसों हुआ था। इसी तरह जब दोनों एक साथ राहु पर होंगे, तब भी सूर्य-ग्रहण होगा।"

"और चंद्र-ग्रहण?" राजू ने पूछा।

"यह देखो", डा० वाचस्पति ने एक और चित्र बनाया, "यहाँ सूर्य राहु पर है और चंद्रमा केतु पर। इस प्रकार सूर्य, पृथ्वी और चंद्रमा फिर एक ही रेखा में हैं, परंतु यहाँ पृथ्वी बीच में है और उसकी छाया चंद्रमा पर पड़ेगी। यह चंद्र-ग्रहण होगा।"

"तो अंकल, अगले महीने फिर सूर्य-ग्रहण नहीं होगा?", शीला ने पूछा।

"नहीं", अंकल बोले। "परसों सूर्य केतु पर था। अब सूर्य को घूम कर राहु तक पहुँचने में लगभग छः मास लगेंगे। जब सूर्य राहु के आस-पास होगा, उस दौरान अमावस्या होने पर कहीं-न-कहीं सूर्य-ग्रहण हो सकता है और पूर्णिमा होने पर कहीं-न-कहीं चंद्र-ग्रहण दिखाई पड़ेगा।"

राजू का चेहरा खुशी से चमक रहा था। वह बोला, "यह तो आपने पूरा रहस्य ही खोल दिया है। और हम राहु को राक्षस ही समझ बैठे थे। हा.... हा....

हा...."

शीला ने कहा, "अंकल, अब हम इस राक्षस से भी नहीं डरेंगे। हम जान गये हैं कि यह हमें खा भी नहीं सकता, और हमारी आँख भी नहीं फोड़ सकता। है न?"

डा० वाचस्पति बोले, "डरने की ज़रूरत नहीं है। पर सूर्य की ओर देखने की ग़लती न करना – ग्रहण के समय भी और वैसे भी। सिर्फ उगते और छिपते सूर्य को देख सकते हो। बाकी हर समय सूर्य का प्रकाश इतना तेज़ होता है कि उससे आँखों का पर्दा जल सकता है। ग्रहण के समय जब पूरा अँधेरा हो जाये, तब भी सूर्य को देखने में ख़तरा है, क्योंकि ग्रहण छूटते ही अचानक प्रकाश हो जाता है और आँखें ख़राब हो सकती हैं। हाँ, चंद्र-ग्रहण को बेशक देखो। उसमें कोई हर्ज़ नहीं है।"

राजू कुछ उदास होकर बोला, "तब क्या सूर्य-ग्रहण को बिल्कुल नहीं देख सकते हैं ?"

डा० वाचस्पति बोले, "उसके लिये विशेष फ़िल्टर मिलते हैं जो जलाने वाली किरणों को रोक देते हैं। यदि ऐसा फिल्टर न हो तो दर्पण से सूर्य की रोशनी किसी दीवार पर फेंकनी चाहिये और दीवार पर ही ग्रहण का दृश्य देखना चाहिये। या पिन-होल कैमरा बना कर उसके पर्दे पर सूर्य को देख सकते हो।"

इतने में भीतर से चाय और मिठाई आ गई। अंकल ने कहा, "लो, मिठाई खाओ। सिर्फ़ सोचने और बोलने से ही नहीं चलेगा; कुछ शक्ति भी आनी चाहिये।"

चाय पीते-पीते राजू ने चुटकी ली, "अंकल, ग्रहण के दिन हमारे घर एक लंबा-सा, काला-सा आदमी आया था। शीला ने उसी को राहु समझ लिया था।"

"और तुम भी तो डर गये थे, भैया ! पर माँ ने बताया कि यह तो महलू डोम है। और हाँ, अंकल, जानते हैं –", उसने हँस कर कहा, "माँ ने सूर्य भगवान को छुड़ाने के लिये महलू को दाल-चावल का दान भी किया ...."

राजू ने उसकी बात काटी, "बल्कि यूँ कह सकते हैं कि रिश्वत या फ़िरौती

दी। हालाँकि सूर्य को न महलू ने पकड़ा और न छोड़ा ही ! माँ भी कैसी अंधविश्वासी हैं!"

डा० वाचस्पति भी खूब हँसे। उन्होंने कहा, "जब महलू मेरे घर आया, और मैंने उसे अनाज दिया, तो मुझे सचमुच यही विचार आया था कि बच्चे उसी को राहु समझ कर डर जायेंगे।"

हँसते-हँसते राजू रुक गया। उसने अविश्वास से डा० वाचस्पति की ओर देखा और बोला,"मगर अंकल, आप भी डोम को दान देते हैं? "

शीला बोली, " आप तो पूरा विज्ञान जानते हैं, फिर भी ?"

अंकल ने कहा, " हाँ। असल में बात यह है कि विज्ञान अपनी जगह पर है और परंपरायें अपनी जगह पर। अब देखो न, महलू जैसों के पास कमाई का साधन ही कितना है ! यदि ग्रहण के समय उन्हें कुछ अनाज मिलने की व्यवस्था बनी हुई है, तो क्या हर्ज़ है ? मगर महलू का बेटा स्कूल में पढ़ रहा है। उसे दान लेने की जरूरत नहीं होगी।"

राजू और शीला के लिये यह एक नई बात थी। कुछ रुक कर शीला ने पूछा, "और अंकल, दादी जो कहती हैं कि ग्रहण के समय भोजन खराब हो जाता है, वह सच है?"

राजू बोला, "अख़बार में भी लिखा था कि ग्रहण के समय सूर्य से कुछ किरणें निकलती हैं। क्या उन्हीं से खाना खराब हो जाता है?"

डा० वाचस्पति ने समझाया, "पका हुआ खाना ख़राब होने का तो कोई कारण नहीं है। पर यहाँ भी समाज की परंपराओं का अपना महत्त्व है। जैसे कुछ लोगों का रिवाज़ है कि शाम ढलने के बाद भोजन नहीं करते। उसी तरह यह भी सामाजिक रिवाज है कि हम लोग ग्रहण के दौरान नहीं खाते-पकाते। कोई आवश्यक नहीं है कि हर रीति-रिवाज़ विज्ञान को आधार मान कर ही बना हो। अब जैसे तुम लोग गले में टाई बाँध कर स्कूल जाते हो। यह स्कूल का नियम है। इसका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है।"

देर काफ़ी हो चुकी थी। राजू और शीला ने डा० वाचस्पति को धन्यवाद दिया और विदा ली। घर की ओर जाते हुए दोनों बहुत ही उत्साहित थे। राजू ने कहा, "मैं अपनी कक्षा में बताऊँगा कि राहु-केतु क्या होते हैं।"

शीला बोली, " और दादीजी और माँ को भी हम बतायेंगे कि राहु और केतु से डरने की ज़रूरत नहीं है। वह न तो हमें खा सकते हैं और न सूर्य को ही। और ग्रहण के समय खाने-पकाने में भी कोई हर्ज़ नहीं है।"

राजू ने कहा, "तब क्या वे अगले ग्रहण के समय भजन वगैरह नहीं करेंगी? क्या माँ अपने समय पर खाना पकायेंगी ?"

शीला ने कुछ सोच कर कहा, "यह तो पता नहीं। पर जो भी हो, वे डरेंगी तो नहीं।"

राजू : "और हम फ़िल्टर लाकर माँ, दादी, पिताजी और पड़ोसियों को भी सूर्य-ग्रहण दिखायेंगे – लीजिये, अपनी आँखों से ही देख लीजिये राहु- केतु, जिनसे सब कोई इतना डरते हैं ! "